ISSN: 2583-5149 | Vol. 2, Issue. 2 |December 2022 | Frequency: Biannual

अभिनवधारा
ABHINAVDHARA
International Journal of Innovation in Indic Studies
www.ijiis-org.com

भारतीय ज्ञान प्रणाली के माध्यम से राष्ट्र व चरित्र निर्माण

डॉ मनु आर्या
असिस्टेंट प्रोफेसर
ए.के.पी.(पीजी) कालेज खुर्जा।

Received: 20 December 2022 | Accepted: 25 December 2022 | Published: 31 December 2022

भारतभूमि वेदों की भूमि है यहां की संस्कृति वेदों से अनुप्राणित संस्कृति है। भारतीय ज्ञान परंपरा का वर्णन वेदों से हुआ है। वेदों में संपूर्ण व्यक्तित्व विकास की कुंजी विद्यमान है। वेद व्यक्ति के आंतरिक व बाह्य दोनों विकासों पर समान बल देते हैं। जितना व्यक्ति के लिए भौतिक ऐश्वर्य, तकनीकी, संसाधन आवश्यक हैं उतने ही मानवीय गुण सहृदयता, सरलता, दया, क्षमा, माधुर्य, स्नेह, सहिष्णुता, करुणा, ममता आदि भी आवश्यक हैं।

भारतीय शिक्षा की पृष्ठभूमि- भारतीय मनीषियों की तप साधना रूपी प्रजा से उठी हुई एक सुव्यवस्थित व संपूर्ण आयामों से परिपूर्ण शिक्षा व्यवस्था है। इस शिक्षा व्यवस्था का लक्ष्य व्यक्ति को सुखी समृद्ध करने के साथ ही दुख, दुख के कारणों से मुक्त करना रहा है। भारतीय शिक्षा न केवल व्यक्ति के बाह्य स्वरूप व बाह्य उन्नति के विकास पर बल देती है। परंतु व्यक्ति के आंतरिक स्वरूप, आंतरिक विकास व आंतरिक उन्नति पर अधिक बल देती है। यहां बाह्य अलंकरणों की अपेक्षा आंतरिक गुणों के आधान पर विशेष बल दिया जाता रहा है इसीलिए भारतीय समाज में **"सादा जीवन उच्च विचार"** जैसी उक्ति प्रचलित रही हैं। भारतीय शिक्षा प्रणाली साक्षात कृतधर्मा ऋषियों की तप त्यागमयी प्रज्ञा से प्रसूत प्रसून है जो संपूर्ण समाज के विकास व व्यवस्था को लेकर स्थित है। यह शिक्षा एक बालक को पूर्ण तपस्वी व समृद्धि क्षमता से युक्त बनाती है। नई शिक्षा नीति व्यक्तित्व के उन पहलुओं पर ध्यान आकृष्ट करती है जोकि पिछले कुछ वर्षों की शिक्षा नीतियों में उपेक्षित रहे हैं जिनके बिना देश समाज राष्ट्र व व्यक्ति का उत्थान संभव नहीं है।

गुरुकुलीय शिक्षा - मूल्यों से तात्पर्य बालक के अंदर मानवीय भावनाओं संवेदना सहृदयता सामंजस्य उदारता दयालुता करुणा ममता वात्सल्य आदि गुणों का विकास करना है इन गुणों के

कारण मनुष्य की पहचान होती है यदि गुण नहीं है तो व्यक्ति और पशु में कोई अंतर नहीं रह जाता है। गुणों का आधान शिक्षा से होता है शिक्षा वह सोपान है जिससे व्यक्ति माननीय मूल्यों के उच्चतम स्तर को प्राप्त करता है तथा समाज में सम्मानित व प्रतिष्ठित होता है प्राचीन शिक्षा पद्धति में बालक के गुणों के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता था जिसके लिए उसे गुरु के पास गुरुकुल में भेज दिया जाता था जहां गुरु बालक का पालन गर्भ की तरह अत्यंत सावधानी से करता था -

आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्रजम्। यथेह पुरुषोऽसत्।।[1]

गुरु बालक को अपने अभिन्न अंग के रूप में देखता था तथा अत्यंत सावधानीपूर्वक उसमें गुणों का आधान व दोषों का परिष्कार करता था। गुरु और शिष्य का परस्पर का संबंध अत्यंत सुदृढ़ व मधुर तथा आपसी प्रेम पर आधारित था । जब उपनयन संस्कार होता है तो गुरु व शिष्य दोनों मिलकर आत्मोन्नति के लिए, आत्मविकास के लिए परस्पर एक दूसरे के सहयोग के लिए प्रतिज्ञा करते हैं। जिसमें गुरु व शिष्य कहते हैं कि हमारा परस्पर चिंतन एक दूसरे के अनुकूल हो हम एक दूसरे के विरोध में ना सोचें हमेशा उन्नति के लिए सोचें -

ओ3म् मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनुचित्तं ते अस्तु।
मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्।।[2]

शिक्षा काल में आचार्य बालक को कहता है कि तुम शास्त्रों को देखकर के आचरण करो शास्त्रों से विपरीत तुम्हारा आचरण व्यवहार ना हो यदि मेरे अंदर तुम्हें कोई त्रुटि नजर आती है तो तुम उसे अपने अंदर धारण नहीं करना जो मेरे अंदर अच्छाइयां हैं उनको स्वीकार करना यह बहुत बड़ी बात है। आचार्य केवल बालक को अपने तक सीमित नहीं रखता है वह उसे संपूर्ण समाज को प्रकृति को व देवताओं को समर्पित कर देता है। इसका तात्पर्य यह होता है कि हर समय मैं तुम्हारे साथ में नहीं रह सकता लेकिन जहां मैं नहीं होऊंगा वहां वायु अग्नि जल पृथ्वी ये तत्व तुम्हारे साथ में रहेंगे ये भी ना हों तो तुम्हारा स्वयं का अंतःकरण व परमपिता परमात्मा प्रतिक्षण तुम्हें देख रहा होगा जिससे तुम त्रुटि करने से बचे रहो। ये सभी तुम्हारे गुरु हैं तुम्हें इनसे भी सीखना है। यहां से बालक के अंदर प्रकृति के इन पदार्थों के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है तथा वह इनसे प्राकृतिक नियमों व दृढ़ता को सीखता है। इनके प्रति उसके मन में दया ममता करुणा के भाव उत्पन्न होते हैं और कभी भी इन्हें हानि पहुंचाने के बारे में विचार नहीं करेगा इसीलिए भारतीय शिक्षा परंपरा प्रकृति के पोषण पर ध्यान देती है प्रकृति की पूजा उसी का एक रूप है।

मूल्यपरक शिक्षा - गुरुकुलीय शिक्षा में बच्चों में मूल्यों के आधान पर विशेष बल दिया जाता था। विशिष्ट शिक्षा वाले गुरुकुल में प्रवेश बालक के दया, सहृदयता, सत्यवादी व अहिंसा आदि मूल्यों को ध्यान में रखकर होता था। यहां

---

[1] यजुर्वेद २/३३

[2] पारस्कर गृह्यसूत्र का. १-८/८

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि ।

असूयकायानृजवेऽयताय न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम्" इति ।।[3]

विद्या ब्राह्मण के पास जाकर कहती है हे ब्राह्मण मेरी रक्षा कीजिए मैं तुम्हारा खजाना हूं। और वह रक्षा करने का तरीका बताती है कि मुझे ऐसे शिष्य को मत दो जो निंदा करने वाला हो, दूसरों के गुणों में दोष देखने वाला हो, कुटिल हो, तपस्वी न हो अर्थात् जो पुरुषार्थ न करता हो तथा जिसको देने पर मैं फलीभूत सफल ना हो पाऊं अर्थात् मेरा सदुपयोग न हो। ऐसे शिष्य को मुझे मत दो जो युक्त न हो, वीतराग न हो, शुद्धचित्त न हो, विनीत एवं जिज्ञासु न हो, ऐसे पुरुष को विद्या का उपदेश नहीं करना चाहिए। कुपात्र के हाथ में विद्या के जाने से उसका दुरुपयोग होता है जैसे कि रावण कंस जैसे व्यक्ति जो पूर्ण शुद्ध चित्त वाले नहीं थे ऐसे कुपात्र शिष्यों के हाथ में पहुंची हुई विद्या समाज का हित नहीं करती। समाज को हानि पहुंचाती है। इसलिए भारतीय समाज में विद्या बहुत सोच समझकर प्रदान की जाती थी। आज के परिप्रेक्ष्य में मापदंड के पैमाने ठीक नहीं हैं जिससे मूल्य परक गुणवत्ता आधारित योग्य व्यक्तियों का चयन नहीं हो पाता है। भारतीय शिक्षा बच्चों में इन मूल्यों को विशेष सावधानी पूर्वक धारण कर आती थी यह शिक्षा समाज निर्माण वह व्यक्तित्व विकास पर बहुत बल देती थी विद्या की पात्रता को बताते हुए आचार्य चाणक्य कहते हैं- **"शुश्रूषाश्रवणग्रहणधारणविज्ञानोहापोहतत्वाभिनिविष्टबुद्धिं विद्या विनयति नेतरम्**"[4] सुनने की इच्छा, सुनना, सुनकर ग्रहण करना, गृहित का धारण, विज्ञान, तर्क वितर्क तथा तत्वाभिनिविष्ट बुद्धि वाले छात्र का ही विद्या वरण करती है अन्य का नहीं। छात्रों के लिए विनय को अत्यंत आवश्यक गुण के रूप में देखा जाता रहा है अतः महाकवि कालिदास कहते हैं - **प्रजानां विनयाधानाद् रक्षणाद् भरणादपि ।**

स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः ।।[5]

संस्कृत साहित्य के ग्रंथों में चारित्रिक उच्चता व राष्ट्रप्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। रामायण कालीन समाज का वर्णन करते हुए महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं -

कामी वा न कदर्यो वा नृशंसः पुरुषः क्वचित् ।
द्रष्टुं शक्यमयोध्यायान्नाविद्वान्न च नास्तिकः ।।
सर्वे नराश्च नार्यश्च धर्मशीलास्सुसंयताः ।
उदिताश्शीलवृत्ताभ्यां महर्षय इवामलाः ।।[6]

छात्रों को गुरुकुल में बाल्यकाल से संयम सदाचार की शिक्षा दी जाती थी जिसके परिणाम स्वरूप विद्या समाप्ति काल आते आते उनका व्यवहार व चरित्र सुदृढ़ बन जाता था। इसका उदाहरण लक्ष्मण के चरित्र में देख सकते हैं। जब भगवान श्री राम माता सीता के आभूषण लक्ष्मण को

---

[3] निरुक्त २/१४

[4] कौ. अर्थशास्त्र १/५/५

[5] रघुवंश १/२४

[6] वा. रामायण १/६/८-९

दिखाते हैं तब लक्ष्मण कहते हैं -

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले ।

नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्।।[7]

चारित्रिक सुदृढता का कितना सुन्दर उदाहरण है। तथा जब हनुमान जी भगवती सीता को खोजते हुए रावण के प्रासाद में अन्य स्त्रियों को देखते हैं तो उन्हें ग्लानि का अनुभव होता है और कहते हैं कि परस्त्री दर्शन का यह कार्य बलात् किया गया है। उन्हें देखकर भी हनुमान जी के चित्त में किसी प्रकार की कामनाएं जागृत नहीं होती हैं।

अर्थशुचिता - भारतीय संस्कृति में अर्थ की स्वच्छता के ऊपर बहुत ध्यान दिया जाता है धन हो पर धन कमाने के साधन पवित्र व स्वच्छ होने चाहिए -

न लोकवृत्तं वर्तेत वृत्तिहेतोः कथं चन ।

अजिह्मां अशठां शुद्धां जीवेद्ब्राह्मणजीविकाम् ।।[8]

जीविका के लिये कभी लोगों को प्रसन्न करके नाटक आदि का पेशा न करें। (अजिह्माम्) पाप रहित, (अशठां) धोखा न देने वाली, (शुद्धां) शुद्ध (जीवेत् ब्राह्मण-जीविकान्) ब्राह्मण के योग्य जीविका को करें।

सर्वेषां एव शौचानां अर्थशौचं परं स्मृतम् ।

योऽर्थे शुचिर्हि स शुचिर्न मृद्वारिशुचिः शुचिः ।।[9]

धर्म से पदार्थों का संचय करना, सब पवित्रताओं में उत्तम पवित्रता है। अतः, जो अन्यथा से(अधर्म,छल, कपट, चोरी आदि) किसी पदार्थ को ग्रहण नहीं करता वही पवित्र है; मिट्टी व जल से जो पवित्रता होती है वह अर्थशुद्धि के समान उत्तम नहीं। अर्थात् जिसके धन कमाने के साधन शुद्ध नहीं हैं वह कितना ही अन्य बातों में शुद्ध क्यों न हो शुद्ध नहीं कहा जा सकता।

वर्तमान समय में धन कमाना मुख्य उद्देश्य रह गया है। धर्म अधर्म की बातें गौण हो गयीं हैं इसलिए चोरी, हत्या व भ्रष्टाचार की घटनाएं बढ़ रही हैं। वर्तमान की युवा पीढ़ी छोटे रास्ते से कम मेहनत में शीघ्रता से धनी बनना चाहती है जिसके लिए गलत रास्ते पर चल पड़ते हैं। साइबर क्राइम जिसका ज्वलंत उदाहरण है।

मानवीय संवेदनाएं - संस्कृत साहित्य में माननीय संवेदनाएं सर्वत्र देखने को मिलती हैं यहां प्रकृति को भोग्या के रूप में न देखकर उपास्या के रूप में देखा जाता है जड़ वस्तुओं के साथ भी चेतनों सा व्यवहार देखने को मिलता है यही कारण है कि भारतीय समाज में तुलसी, पीपल, नदियों आदि की पूजा देखने को मिलती है। शकुंतला के वन गमन के समय एक छोटा हिरन सा शावक शकुंतला के मार्ग को अवरुद्ध कर रहा है तो उसका कारण बताते हुए महर्षि कण्व कहते हैं कि तुमने जब इसका मुख छिल गया था उस समय तुमने इसके घावों पर औषधि लगाकर

---

[7] वा. रा.४/६/२२

[8] मनुस्मृति ४/११

[9] वही ५/१०६

सेवा की थी वही हिरण का बच्चा अब तुम्हें जाने से रोक रहा है-

यस्य त्वया व्रणविरोपणमिङ्गुदीनां तैलं न्यषिच्यत मुखे कुशसूचिविद्धे ।
श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते ॥[10]

ऐसे अनगिनत उदाहरण भारतीय समाज में देखने को मिलते हैं जहां एक किसान अपने खेत में कृषि काटते समय पशुओं के लिए पक्षियों के लिए उनका भाग छोड़ देता है प्रतिदिन मातायें पशु पक्षियों कीड़े मकोड़ों के लिए भी उनके हिस्से का भोजन अर्पित करती हैं ।

सेवा व समर्पण - भारतीय शिक्षा परंपरा सेवा पर आधारित है तथा यहां समर्पण का महत्वपूर्ण स्थान है। एक छात्र गुरुकुल में रहते हुए अपने लिए व अपने गुरु के लिए भोजन की व्यवस्था करता है गुरु के यज्ञ, दैनिक कृत्यों के लिए आवश्यक साधन जुटाता है। यह शिक्षा व्यवस्था गुरु सेवा के साथ समाज सेवा व मानवीय सेवा को सिखाती है। विद्यार्थी के लिए दूसरा महत्वपूर्ण बिंदु है समर्पण। समर्पण के बिना विद्या प्राप्ति नहीं हो सकती। जब युद्ध भूमि में अर्जुन पूरी तरह से अपने आप को भगवान श्री कृष्ण के समर्पित कर देता है तभी भगवान श्री कृष्ण उसकी सभी शंकाओं का समाधान करते हैं। एक शिष्य में ये सभी गुण होने अत्यंत आवश्यक हैं जब तक शिष्य का गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण नहीं है गुरु के प्रति श्रद्धा नहीं है तो विद्या प्राप्त होने पर भी वह विद्या को फलीभूत नहीं कर पाएगा। महर्षि स्वामी दयानंद गुरु विरजानंद के पास विद्याध्ययन के लिए जाते हैं तब गुरु विरजानंद पूर्व पठित सारी पुस्तकों को यमुना में बहाने के लिए बोल देते हैं और स्वामी दयानंद गुरु के वचनों पर विश्वास करके उन सभी पुस्तकों को यमुना में बहा देते हैं। उसका फल स्वामी दयानंद के जीवन में देखने को मिलता है। यह है गुरु के प्रति समर्पण। इसी को विद्या सिखाती है इसी से विनम्रता आती है जिसको कहते हैं **"विद्या ददाति विनयम्"।**[11]

जब छात्र गुरुकुल से अध्ययन समाप्त कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर रहा होता है उस समय आचार्य उसे स्व जीवन को उन्नत बनाए रखने के लिए व समाज की सुव्यवस्था व उन्नति के लिए करणीय कर्मों का उपदेश देता है **"सत्यं वद धर्मं चर स्वाध्यायन्मा प्रमदः, देवपितृकार्यभ्यां मा प्रमदितव्यम्"** । उसी समय आचार्य उसे विनम्र बने रहने का उपदेश भी देता है। **ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः।अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथाः। अथाभ्याख्यातेषु।ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषु वर्तेरन्। तथा तेषु वर्तेथाः।**[12] यह उपदेश विद्यार्थी को आगे जीवन में भी विनम्र बनाए रखता है।

कौशल परक वैज्ञानिक शिक्षा - बालक के व्यक्तित्व विकास के साथ ही भारतीय ज्ञान परंपरा में

---

[10] अभि. शाकु. ४/१३

[11] हितोपदेश ६

[12] तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षा. ११/ १-२

उसे 32 विद्या व 64 कलाओं में निपुण बनाया जाता था जहां उसे कृषिशास्त्र, जलशास्त्र, खनिशास्त्र, रथशास्त्र, नौका शास्त्र, अग्नियानशास्त्र, वेश्मशास्त्र, प्राकार शास्त्र, नगररचनाशास्त्र, यंत्रशास्त्र जैसे विषय यथारुचि सिखाये जाते थे। जिससे वह आजीविका के उपार्जन में आत्मनिर्भर रहता था तथा समाज के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता था। विद्या की उपादेयता तभी है जब वह अर्थोपार्जन में सहायक हो **"अर्थकरी च विद्या"।** भारतीय ज्ञान परंपरा नैतिकता व जीविकोपार्जन दोनों के सामंजस्य के साथ में चलती है जिसका परिणाम यह था कि सभी धन धान्य से परिपूर्ण थे-

नाल्पसंनिचयः कश्चिदासीत्तस्मिन्पुरोत्तमे |

कुटुम्बी यो ह्यसिद्धार्थोऽगवाश्वधनधान्यवान् ||[13]

भारतीय ज्ञान परंपरा में तक्षशिला व नालंदा जैसे विश्वविद्यालय रहे हैं जहां विदेशी नागरिक आकर शिक्षा ग्रहण किया करते थे। तथा आचरण व्यवहार की शिक्षा यहीं से प्राप्त करते थे।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।[14]

तक्षशिला गुरुकुल ने आचार्य चाणक्य जैसे व्यक्तित्व समाज को प्रदान किए हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा आज भी समाज परिवर्तन व बालकों के विकास में उसी भूमिका का निर्वहन करने में समर्थ है। जो उच्च आदर्श व स्थितियां विदेशी नागरिक मेगस्थनीज आदि भारत के बारे में वर्णन करते थे। बहुत पीछे न भी जायें 1835 में लार्ड मैकाले जब ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारत भ्रमण का रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं तब वे कहते हैं कि यहां की शिक्षा व्यवस्था बहुत ही उच्च श्रेणी की है भारत में कोई भी गरीब भूखा बेरोजगार अनपढ़ नहीं है। सभी सुखी समृद्ध व संपन्न हैं। हमें इन्हें लंबे समय तक गुलाम बनाए रखना है तो इसके लिए यहां की शिक्षा व्यवस्था को नष्ट करना होगा जिसको कि वे करते हैं और उसका परिणाम आज हम वर्तमान में देख सकते हैं भारत में गरीब अनपढ़ शिक्षित बेरोजगारों की बहुत लंबी भीड़ खड़ी हुई है इन्हीं सब को तोड़ने के लिए भारत को पुनः गौरवपूर्ण पद प्राप्त कराने के लिए नई शिक्षा नीति 2020 लाई गई है। हम आशा करते हैं कि यह शिक्षा नीति हमें पुनः अपने गरिमामय पद को प्राप्त कराये व भारत की संपन्नता अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखने में सहयोग करे।

---

[13] वा. रामायण १/६/७

[14] मनुस्मृति २/२०